अंडे और पुरुष के शुक्राणु का मेल शरीर से बाहर करवाकर अल्प विकसित भ्रूण को वापिस महिला के गर्भाशय में डाल देते हैं। सरल से नज़र आने वाले इस विचार को तकनीक का रूप दिया था दो ब्रिटिश डॉक्टर्स पैट्रिक स्टेपटो और रॉबर्ट एडवर्ड्स ने 1978 में। तब से आज तक इस तकनीक में कई परिष्कार हुए हैं और एक अनुमान के मुताबिक अब तक इस तकनीक के उपयोग से करीब 10 लाख बच्चे पैदा हो चुके हैं। इन पच्चीस बरसों का लेखा जोखा,,,

परखनली शिशु की पच्चीसवीं सालगिरह

डॉ. सुशील जोशी

25 जुलाई को दुनिया की पहली परखनली बच्ची लुई ब्राउन ने अपनी पच्चीसवीं सालगिरह मनाई। इस मौके पर वैज्ञानिकों ने लंदन में एक बैठक करके इन 25 बरसों की प्रगति का जायज़ा लिया। इस दौरान जहां प्रजनन की विभिन्न तकनीकों में बहुत तरक्की हुई है वहीं कई पुरानी समस्याएं जस की तस हैं और कई नई समस्याएं उभरी हैं।

वैसे विचार के स्तर पर परखनली शिशु यानी गर्भाशय के बाहर निषेचन (इन विट्रो फर्टिलाइज़ेशन, आई.वी.एफ.) काफी सरल है। इसमें डॉक्टर महिला के अंडे और पुरुष के शुक्राणु का मेल शरीर से बाहर करवाते हैं और फिर जो भ्रूण बनता है उसे वापिस महिला के गर्भाशय में डाल देते हैं। सरल से नज़र आने वाले इस विचार को तकनीक का रूप दिया था दो ब्रिटिश डॉक्टर्स पैट्रिक स्टेपटो और रॉबर्ट एडवर्ड्स ने। तब से आज तक इस तकनीक में कई परिष्कार हुए हैं और एक अनुमान के मुताबिक अब तक इस तकनीक के उपयोग से करीब 10 लाख बच्चे पैदा हो चुके हैं।

यह तकनीक मूलतः उन महिलाओं की मदद के लिए सोची गई थी जिनमें किसी वजह से अंडे का निषेचन नहीं हो पाता। मसलन, हो सकता है कि उनकी अंडवाहिनी (अंडे को अंडाशय से बच्चादानी तक पहुंचाने वाली नली) में कोई अवरोध हो जिसकी वजह से शुक्राणु अंडे तक पहुंच ही न पाते हों या हो सकता है कि किसी महिला के गर्भाशय का वातावरण शुक्राणु के अनुकूल न हो वगैरह। अलबत्ता आजकल इस तकनीक के कई रूपों का उपयोग अन्य कारणों से भी हो रहा है।

टेक्नॉलॉजी का त्रास

वैसे तो करना मात्र इतना ही होता है कि महिला के शरीर से अंडे प्राप्त किए जाएं, पुरुष के शुक्राणु प्राप्त किए जाएं और उन्हें एक पोषक माध्यम में साथ-साथ रख दिया जाए। मगर इसमें महिला को काफी त्रास से गुज़रना होता है। जैसे महिला के शरीर में कुदरती तौर पर प्रति माह एक (या कभी-कभार दो) अंडा परिपक्व होता है। मगर आई.वी.एफ. की सफलता के लिए ज़रूरी है कि एक साथ कई अंडे उपलब्ध हों। एक ही अंडा हो तो

निषेचन की संभावना काफी कम होती है। लिहाज़ा, महिला को ऐसी दवाइयां दी जाती हैं ताकि उसके शरीर में अति-अंडोत्सर्ग हो। इसके अलावा भी महिला को कई दवाइयां वगैरह लेते रहना होता है। और यदि एक बार में निषेचन न हो तो पूरी प्रक्रिया फिर दोहराई जाती है।

अभी युवा महिलाओं में आई.वी.एफ. की सफलता दर 4 मासिक चक्रों में एक गर्भावस्था की है। मतलब यदि किसी महिला को इस पद्धति से गर्भवती होना है तो उसे चार मासिक चक्रों तक कोशिश करनी पड़ सकती है। यह कोशिश शारीरिक रूप से ही नहीं मानसिक रूप से भी त्रासदायक होती है।

ज़्यादा जुड़वां बच्चे

इतने बरसों की सारी प्रगति के बावजूद आज भी आई.वी.एफ. के ज़रिए सामान्य से अधिक जुड़वां बच्चे पैदा होते हैं। इसका कारण यह है कि जब शरीर के बाहर निषेचन से भ्रूण बनाए जाते हैं तो उन्हें बहुत देर तक शरीर से बाहर रखकर विकसित करना फिलहाल संभव नहीं है। इसलिए जल्दी ही उन्हें वापिस उनकी कुदरती जगह यानी बच्चादानी में पहुंचाना होता है। यदि एक ही भ्रूण वापिस बच्चादानी में रखा जाए तो हो सकता है कि गर्भ न ठहर पाए। इसलिए (सफलता की दर बढ़ाने के लिए) अक्सर एक से अधिक भ्रूण वापिस गर्भाशय में रखे जाते हैं। कई बार दो या तीन भ्रूण वहां बस जाते हैं। यह महिला व बच्चे दोनों के स्वास्थ्य के लिए जोखिम हो सकता है। इस संदर्भ में युरोप में तो कानून बन गया है कि किसी भी हालत में दो से ज़्यादा भ्रूण वापिस बच्चादानी में नहीं रखे जाएंगे।

अभी युवा महिलाओं में आई.वी.एफ. की सफलता दर 4 मासिक चक्रों में एक गर्भावस्था की है। मतलब यदि किसी महिला को इस पद्धति से गर्भवती होना है तो उसे चार मासिक चक्रों तक कोशिश करनी पड़ सकती है। यह कोशिश शारीरिक रूप से ही नहीं मानसिक रूप से भी त्रासदायक होती है।

संतानहीनता की ज़िम्मेदारी

एक सवाल यह है कि प्रजनन सम्बंधी तकनीकें जहां एक ओर नए-नए विकल्प उपलब्ध कराती हैं वहीं वे एक किस्म की विवशता भी उत्पन्न करती हैं। जैसे आई.वी.एफ. तकनीक उपलब्ध हो जाने का अर्थ यह हो जाता है कि महिला को 'बांझपन' से एक और स्तर पर जूझना होगा। अपना 'स्त्रीत्व' प्रमाणित करने हेतु उसे मजबूरन यह तकनीक भी आज़मानी होगी। इसका एक आयाम और भी सामने आया है।

आई.वी.एफ. तकनीक में एक सुधार यह हुआ है कि अब शुक्राणु को इंजेक्शन के ज़रिए सीधे अंडे के अंदर पहुंचाया जा सकता है। यानी अब निषेचन में चांस लेने की ज़रूरत नहीं है। यह तकनीक उन महिलाओं के लिए नहीं है जिनकी अंडवाहिनी में अवरोध वगैरह हो। यह तकनीक दरअसल उन पुरुषों की मदद के लिए है, जिनके शरीर में शुक्राणु की संख्या कम हो या जिनके शुक्राणु किसी भी वजह से निषेचन को अंजाम न दे पाते हों। मगर इसमें महिला को तो अति-अंडोत्सर्ग वगैरह सारी प्रक्रिया से गुज़रना ही होता है, गोया समस्या उसी के साथ हो।

जिनेटिक रोगों का जोखिम

हाल में हुए कुछ अध्ययनों से यह आशंका उभरी है कि आई.वी.एफ. तथा अन्य प्रजनन सहायक तकनीकों की मदद से पैदा हुए बच्चों को जिनेटिक रोगों का खतरा ज़्यादा है। वैसे अभी कोई अंतिम निष्कर्ष निकालना मुश्किल है क्योंकि अभी इन तकनीकों से पैदा हुए बच्चे बहुत बड़े नहीं हुए हैं। इस मामले में अभी काफी अध्ययनों की ज़रूरत है।

एक नई समस्या

आई.वी.एफ. तकनीक से तैयार भ्रूण को बच्चादानी में प्रत्यारोपित करने से पूर्व उसकी जिनेटिक जांच की जा सकती है। जिनेटिक जांच की तकनीकों में विकास के

साथ-साथ इसके नए-नए आयाम सामने आ रहे हैं। मसलन, ब्रिटिश विटेकर दम्पति ने एक विचित्र काम किया। उनका पहले से एक बच्चा था जिसे एक बिरला रक्त दोष था। विटेकर दम्पत्ति ने आई.वी.एफ. तकनीक और जिनेटिक जांच के मिले-जुले उपयोग से एक ऐसा भ्रूण तैयार करवाया और बच्चा पैदा किया जिसकी अस्थि मज्जा का उपयोग उनके पहले वाले बच्चे में प्रत्यारोपण हेतु किया जा सके। इसके चलते कई सवाल उठ खड़े हुए हैं। जैसे क्या किसी माता-पिता को यह अनुमति दी जा सकती है कि वे अपनी जान बचाने के लिए एक खास गुण वाला बच्चा पैदा कर लें? एक बार भ्रूण में किसी भी तरह के चयन की अनुमति मिली तो क्या लोग मनपसंद (गोरे, या अच्छे नाक-नक्श वाले, या किसी और गुण से सम्पन्न) बच्चे पैदा करने की कोशिशें नहीं करने लगेंगे? क्या नैतिक या सामाजिक तौर पर यह मंज़ूर किया जा सकता है?

एक सवाल चिकित्सकीय क्लोनिंग का भी है। यह क्लोनिंग का ही एक रूप है मगर इसमें पूरा फोकस भ्रूण तैयार करने पर होता है। इस भ्रूण का उपयोग आजकल स्टेम कोशिकाएं प्राप्त करने हेतु किया जाता है। ऐसा माना जा रहा है कि स्टेम कोशिकाओं के उपयोग से किसी भी तरह का ऊतक बनाया जा सकता है और फिर उसका उपयोग प्रत्यारोपण हेतु किया जा सकता है। इस तकनीक पर कई देशों में प्रतिबंध है मगर कई देश इसकी सशर्त अनुमति देते हैं।

आगे के कदम

अभी आई.वी.एफ. की तकनीक सबके लिए उपयोगी नहीं है। मसलन एक उम्र से ज़्यादा की महिलाओं में यह सफल नहीं होती क्योंकि उनमें अंडों का उत्पादन कम हो जाता है। वैज्ञानिक मान रहे हैं कि आने वाले वर्षों में यह अनुसंधान का एक प्रमुख विषय होगा। हो सकता है कि वैज्ञानिक कोई ऐसी तकनीक विकसित कर लें जिससे महिलाओं में अंडा उत्पादन की प्रक्रिया न रुके। या शायद युवावस्था में उनके अंडे लेकर रख लिए जाएं और बाद में ज़रूरत पड़ने पर उनका इस्तेमाल किया जाए।

परखनली शिशु यानी आई.वी.एफ. तकनीक से पूर्व निसंतान दम्पतियों के लिए चलाए जाने वाले क्लिनिक खास मददगार नहीं होते थे। इस तकनीक ने वाकई एक ज़ोरदार औज़ार मुहैया करा दिया है। मगर इसकी अपनी सामाजिक, नैतिक व शारीरिक दिक्कतें हैं। मगर सबसे प्रमुख सवाल यह है कि 'बांझपन' की तकनीकों का लगातार विकास करते जाने से कहीं यह 'समस्या' अनावश्यक तूल तो नहीं पकड़ रही है। यही सवाल उन तकनीकों को लेकर भी है जो जन्म से पूर्व ही आपको बच्चे का लिंग पता करने में मदद करती हैं। ये तकनीकें उपलब्ध हो जाने से समाज, खासकर भरतीय समाज में मौजूद पूर्वाग्रहों को ही हवा मिली है। *(स्रोत फीचर्स)*

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

सदस्यता शुल्क कृपया एकलव्य, भोपाल के नाम बने ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से एकलव्य, ई-7/ एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) 462 016 के पते पर भेजें।